गूँज उठी शहनाई

सुगन्धा उपासनी

चित्रः सुगन्धा उपासनी

संगीत की दुनिया में उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ शहनाई के बादशाह माने जाते हैं। उनका जन्म 21 मार्च 1916 में दरबारी गायकों और शहनाई वादकों के परिवार में दुमराव (बिहार) में हुआ। वे मीतान और पिता पैगम्बर खान के दूसरे बेटे थे।

उनका नाम पहले कमरुद्दीन रखा गया। लेकिन जब उनके दादाजी ने उनको देखा तो दुआ में हाथ उठाकर बस यही कहा, "बिस्मिल्लाह!" और इस तरह उनका नाम बिस्मिल्ला पड़ा। उनके पिता राजा भोजपुर के दरबार में गायक थे। परदादा हुसैन बख्श और दादा रसूल बख्श खान भोजपुर के राजा के दरबार में शहनाई-नवाज़ थे। उनके मामा अली बख्श मन्दिर में रोज़ सुबह, दोपहर और शाम शहनाई बजाते। उस्ताद बिस्मिल्ला खान बड़े ध्यान से अपने मामा को अलग-अलग राग बजाते हुए सुनते। मन्दिर में बजाने के बाद अली बख्श बालाजी मन्दिर के एक कमरे में घण्टों रियाज़ करते। इस बात का उस्ताद बिस्मिल्ला खान पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने अपने मामा से शहनाई सीखने की इच्छा प्रकट की। और तभी से शहनाई सीखने लगे।

बिस्मिल्ला साब के पिताजी की इच्छा थी कि वे और आगे पढ़ें। लेकिन वे शहनाई को छोड़ न सके। उनके मामा ने उन्हें रागों के बारे में बताया, उन्हें बजाने का तरीका भी सिखाया। गाने की शैली भी सिखाई ताकि वे शहनाई वादन में और कमाल ला सकें। दुमराव में उन्होंने अपने दादाजी से भी काफी कुछ सीखा। जैसे, अधिक शक्ति से शहनाई में फूँकना और स्वरों को देर तक बनाए रखना। शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ उन्होंने उत्तर प्रदेश का लोक संगीत जैसे, ठुमरी, कजरी, चैती भी सीखी। चौदह साल की उमर में इलाहाबाद संगीत सम्मेलन में उन्होंने पहली बन्दिश बजाई।

अब कुछ शहनाई के बारे में...

शहनाई भारत के सबसे पुराने वाद्यों में से एक है। शहनाई फारसी मूल का शब्द है। "शह" का अर्थ फारसी में राजा होता है और "नाई" का अर्थ पवन साधना। यह वाद्य मंगल कार्यों जैसे शादियों आदि में बजाया जाता है। होंठ और जीभ का इस्तेमाल बजाने में किस तरह किया जाता है, किस तरह हवा फूँकने के लिए कम या ज़यादा ज़ोर इस्तेमाल किया जाता है, शहनाई के छेदों को उँगलियों से किस अन्दाज़ से बन्द किया या खोला जाता है – शहनाई की अलग-अलग ध्वनियाँ और स्वर इनसे तय होते हैं।

उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ ने शहनाई में काफी बदलाव किए हैं। उन्होंने तार वाले अन्य वाद्यों के कई अंग शहनाई में शामिल किए। इसके अलावा उन्होंने गायकी का अन्दाज़, इसका सुन्दर चलन, लयकारी, हरकतें, आन्दोलन भी शहनाई में शामिल कीं।

बिस्मिल्ला साब का शहनाई वादन

उस्ताद जी की लोकप्रियता का कारण उनकी शहनाई से निकली ध्वनि की उत्कृष्टता है। साँसों पर उनका नियंत्रण कमाल का था। इसलिए वे शहनाई के तीव्र और कभी-कभी कानों को चुभाने वाली ध्वनि को निकाल पाते थे। वे स्वरों को देर तक बनाए रख पाते थे। उनके भाव से ओतप्रोत राग विस्तार, सुन्दर मींद, तेज़ गमक और तान उनकी प्रतिभा और गुणवत्ता के प्रतीक थे। वे राग के स्वभाव को मधुर तानों द्वारा सामने लाते थे। महत्वपूर्ण और लोकप्रिय राग जैसे भैरव, ललित, गुजरी तोड़ी, वृन्दावनी सारंग, मुल्तानी, मालकौंस आदि में उन्होंने कई राग भाव जगाए हैं। सुनने वालों को हर बार मोहित कर दिया है। उनके द्वारा बजाया हुआ राग वागेश्वरी अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। इसमें विरह के भाव बड़ी खूबसूरती से प्रकट हुए हैं। लोक संगीत जैसे, ठुमरी, कजरी, धुन ये प्रकार भी उन्होंने बड़े ही भावपूर्ण तरीके से बजाए हैं। उनका सहज रूप से बजाना उनके संगीत की मधुरता को और बढ़ाता है। कहते हैं जब वो बजाते थे तो उनकी शहनाई बोलती थी। उनके संगीत में ऐसा जादू था कि आम आदमी और संगीत को जानने वाले सभी भाव विभोर हो जाते थे।

बिस्मिल्ला साब से यतीन्द्र मिश्र की बातचीत

का एक अंश

बिस्मिल्ला खाँः याद आता है कि पंचगंगा घाट पर बालाजी का मन्दिर है, और वहाँ मंगला माई (मंगला गौरी) का मन्दिर भी बगल में है। हम और हमारे बड़े भाई साहब शम्सुद्दीन घण्टों वहाँ बैठकर रियाज़ करते थे। बालाजी मन्दिर के पास हमारे नाना व परनाना भी शहनाई बजाया करते थे। मालूम है वहाँ हमने कितने में शहनाई बजाई है – आठ आने में। बात ऐसी है कि हम बजा रहे थे, तब तक मन्दिर से पण्डित जी निकलकर आए और बोले,

"हियाँ आ लड़के। तू रोज़ हियाँ बजाता है। मन्दिर के सामने आरती के समय बजा दिया कर।" हमने कहा, "हाँ, महाराज ज़रूर पर एक रुपया लेंगे, निखालिस एक रुपया।" पण्डित जी बोले, "नाहीं, ई बहुत ज़्यादा है।" फिर हमारा सौदा अठन्नी में पटा। हम भी खुश कि मुफ्त में यहाँ बैठे रोज़ रियाज़ करते थे, अब अठन्नी मिल जाया करेगी। बस, शहनाई का प्याला मन्दिर की ओर कर दिया और दोने में रोज़ पेड़ा प्रसाद भी मिल जाया करता था। रोज़ अठन्नी का लालच ज़बरदस्त था क्योंकि उतने में खूब गोल-गोल बनारसी कचौड़ी, शुद्ध देसी घी की जलेबी, मलाई बरफ और आलू टमाटर की छौंकनी वाली सब्ज़ी सब पेटो-पेट मिल जाया करता था। उस समय कुलसुम-कुलसुम करके एक औरत आती थी, घर के बाहर उसकी कचौड़ी की दुकान थी। दो आने में चार पूड़ी और एक दोना सब्ज़ी मिल जाया करती थी। हम रोज़ खाएँ भी, यार-दोस्तों को खिलाएँ भी। उस समय जब वह कलकलाते तेल में पूरी डालती थी और वह छन से बोलता था, तो हमें उसमें भी सुर सुनाई देता था। जैसे उस ज़माने में असली तेल था और गमकता घी; वैसे ही उस ज़माने में सबके सुर और साज़ भी गमकते थे; मगर अब वैसा पाना बड़ा मुश्किल हो गया है। ऐसी बहुत सारी चीज़ें हमारे देखते-देखते पक्का महाल (काशी विश्वनाथ से लगा हुआ अधिकतर इलाका पक्का महाल कहलाता है) से गायब हो गईं, वैसे ही बहुत सारी परम्पराएँ अब दिखाई नहीं पड़तीं।

उनकी जीवन शैली बहुत ही सादी थी। वे अपनी पूरी ज़िन्दगी बनारस में रहे। बनारस में वे अक्सर साइकिल रिक्शे में घूमा करते। अमरीका की रॉक फेलर फाउण्डेशन ने जब उनको वहाँ बसने को कहा तो वे बोले कि मेरी गंगा वहाँ कहाँ से बहाओगे। काशी के लिए उनका प्रेम ज़ाहिर था। अक्सर वहाँ के मन्दिरों में, गंगा के तट पर वे शहनाई बजाते।

जीवन के अन्तिम सालों में वे कहा करते थे, "संगीत अभी भी एक महासागर है। मुझे इसे पार करना है। अभी मैं इसके किनारे तक भी नहीं पहुँचा हूँ। अभी मैंने इस सागर में डुबकी भी नहीं लगाई है।"

21 अगस्त सन् 2006 में 90 साल की उम्र में दिल का दौरा पड़ने से वे चल बसे। उनकी इच्छा थी कि शहनाई हमेशा उनके साथ रहे। उनकी चाहत के मुताबिक उनकी शहनाई भी उनके साथ दफनाई गई।

1938 में जब ऑल इंडिया रेडियो की शुरुआत हुई तब उस्ताद जी रेडियो पर नियमित शहनाई वादन प्रस्तुत करने लगे। 15 अगस्त 1947 को जब भारत को आज़ादी मिली तब उनको लाल किले में अपने शहनाई वादन के द्वारा सबको बधाई देने का गौरव प्राप्त हुआ। सुनने वालों में उस दिन जवाहरलाल नेहरू और महात्मा गांधी भी थे। भारत के पहलगणतंत्र दिवस पर उन्होंने लाल किले में राग काफी बजाकर सबको मंत्रमुग्ध कर दिया। सालों तक वे इस अवसर पर शहनाई बजाते रहे।

उनको बहुत सारे पुरस्कारों से नवाज़ा गया। 2001 में भारत रत्न, उससे पहले राजीव गाँधी सद्भावना पुरस्कार, पद्म विभूषण, पद्म भूषण, पद्म श्री। वे पहले भारतीय थे जिनको लिंकन सेंटर हॉल यूएसए में संगीत समारोह के लिए आमंत्रित किया गया था। उन्होंने सत्यजीत राय की फिल्म *जलसागर* में अभिनय भी किया था। फिल्म *गूँज उठी शहनाई* में उन्होंने "मेरे सुर और तेरे गीत" में शहनाई बजाई थी। और उसमें एक गाना भी बनाया था, "दिल का खिलौना हाय टूट गया।" फिल्म *स्वदेश* में "ये जो देस है मेरा" में भी उन्होंने शहनाई बजाई है।

चित्रः सुगन्धा उपासनी

2010 अन्तर्राष्ट्रीय जैवविविधता वर्ष

फोटो: युवराज गुर्जर

शिकारी-चींटी

अच्छा, ऐसा होता है न? जब हम शिकारी जीवों की बात करते हैं तो हमारे मन में ऊँचे-पूरे, खूँखार जानवर आते हैं। पर, कभी-कभी एक अदना-सा जीव भी बड़े-बड़ों को पानी पिला देता है। लाल चींटियों के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है? ये जो टिड्डा (प्रेइंग मेंटिस) तुम देख रहे हो वो चींटी से ज़्यादा नहीं तो सौ गुना बड़ा होगा। पर, देखो चींटियों की फौज के सामने कैसा असहाय पड़ा है!

चींटियाँ बहुत ही करीने से, योजना बनाकर शिकार करती हैं। पहले वे शिकार के पीछे से ऊपर चढ़ बैठती हैं और उसकी आँखें कुतर डालती हैं। शिकार की आँखों के जाते ही वे उसके दूसरे अंगों को खाना शुरू कर देती हैं।